पंचायती राज : उपलब्धियां और चुनौतियां

–जॉर्ज मैथ्यू

हाल ही में देश के ग्रामीण भागों में ग्रामीणों को कैशलैस और पेपरलैस प्रक्रियाओं के लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से और गांव–स्तर पर डिजिटल वित्तीय लेनदेन को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाओं पर विचार किया गया है। अन्य योजनाएं जैसे आदिवासी इलाकों में वित्तीय समावेशन परियोजनाएं, वर्किंग वुमैन होस्टल, भू–सूचनात्मक ब्लॉक पंचायतें आदि प्रगतिशील पंचायती राज संस्थावाद के उदाहरण है जो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैली हुई हैं।

देश पंचायतों और नगर पालिकाओं की नई पीढ़ी की 25वीं वर्षगांठ मना रहा हैं। जब 24 अप्रैल, 1993 को पंचायतों को और 1 जून, 1993 को नगरपालिकाओं को "ऐसी शक्तियां और अधिकार दिए गए जो स्वशासन के संस्थानों के रूप में कार्य करने में सक्षम बनाने के लिए शायद जरूरी थे", यह एक 'मौन क्रांति' की शुरुआत थी। इसके अलावा, यह ऐतिहासिक था। भारत के गणतंत्र बनने के 43 साल बाद महात्मा गांधी और उन सभी का सपना सच हुआ जिन्होंने "लोगों को सत्ता" देने का समर्थन किया था।

आठ साल बाद, 27 अप्रैल 2001 को, प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री चंद्रबाबू नायडू को लिखा "आपको याद होगा कि संविधान के भाग IX के रूप में संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम 1992 के पारित होने के साथ, पंचायती राज संस्थानों (पीआरआई) को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। संशोधन के परिणामस्वरूप, संघीय राजनीति में पंचायतों को शासन के तीसरे स्तर के रूप में देखा गया है।"

वर्ष 1992–93 में ऐतिहासिक संवैधानिक संशोधन के परिणामस्वरूप राजनीतिक सशक्तिकरण का जो दौर शुरू हुआ, वह वास्तव में अभूतपूर्व है।

जब एनडीए सरकार सत्ता में आई, भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति श्री प्रणब मुखर्जी ने 9 जून, 2014 को संसद में अपने संबोधन में कहा: "मेरी सरकार सशक्त पंचायती राज संस्थानों के माध्यम से हमारे गांवों में जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने के लिए प्रतिबद्ध है। निवेश का एक बड़ा हिस्सा सामुदायिक संपत्ति बनाने और सड़कों, आश्रय, बिजली और पेयजल जैसे बुनियादी ढांचे में सुधार पर फोकस होगा। मेरी सरकार रुर्बन के विचार से निर्देशित ग्रामीण–शहरी विभाजन को समाप्त करने का प्रयास करेगी; यानी गांवों के आचारों को संरक्षित रखते हुए ग्रामीण इलाकों में शहरी सुविधाएं प्रदान करना।" भारत में संस्थागत पंचायती राज सुधारों का मूल आधार 6 लाख से अधिक गांवों और स्थानीय स्तर पर उनके शासन में निहित है। बलवंत राय मेहता समिति की सिफारिशों (1957) के साथ, जिसने समकालीन पंचायती राज को जन्म दिया, इसके प्रगतिशील उत्थान ने कई सफलताएं अपने नाम की जिसकी छाप पूरे देश पर पड़ी। इसने एक से अधिक तरीकों से लोकतांत्रिक भागीदारी को बढ़ावा दिया है।

सामूहिक रूप से, यह देखा गया है कि पंचायती राज संस्थानों के माध्यम से पूरे देश में लोकतंत्र की जड़ें गहरी हुई हैं। देशभर में गांवों के माध्यम से और उनके समग्र प्रभाव से स्थानीय–स्तर पर प्रतिनिधित्ववादी संचालन के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ।

हाल ही में देश के ग्रामीण भागों में ग्रामीणों को कैशलैस और पेपरलैस प्रक्रियाओं के लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से और गांव–स्तर पर डिजिटल वित्तीय लेनदेन को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाओं पर विचार किया गया है। अन्य योजनाएं जैसे आदिवासी इलाकों में वित्तीय समावेशन परियोजनाएं, वर्किंग वुमैन होस्टल, भू–सूचनात्मक ब्लॉक पंचायतें आदि प्रगतिशील पंचायती राज संस्थावाद के उदाहरण है जो देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैली हुई हैं।

गंभीर सामाजिक और राजनीतिक बाधाओं जैसे– सामाजिक असमानता, जाति व्यवस्था, पितृसत्ता, सामंती व्यवस्था, निरक्षरता, असमान विकास – जिनके भीतर ही इसे कार्य करना है, नए पंचायती राज ने स्थानीय शासन में एक नया अध्याय खोला है।

आज स्थानीय/स्वशासन संस्थानों के चुनाव में हर पांच साल में चुनाव एक मानक बन गए हैं, हालांकि प्रारंभिक वर्षों में, लगभग सभी राज्यों ने सत्ता में होने के बावजूद, संविधान के प्रावधानों को खारिज करने में अपनी पूरी शक्ति लगा दी थी। चूंकि नागरिक समाज संगठनों ने सार्वजनिक हितों के मुकदमे (पीआईएल) दर्ज करके कुछ राज्यों से उनके संविधान विरोधी/असंवैधानिक दृष्टिकोण से लड़ने के लिए पहल की; साथ ही, विभिन्न स्तरों पर न्यायपालिका प्रभावी ढंग से हस्तक्षेप कर रही थी। राज्य निर्वाचन आयोगों (एसईसी) जैसे संवैधानिक निकायों ने पंचायत चुनावों को गंभीर रूप से लेते हुए ज़मीनी–स्तर की लोकतांत्रिक प्रक्रिया को काफी विश्वसनीयता प्रदान की है। 3 मई, 2002 को सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए आदेश से क्यू लेते हुए जोकि आपराधिक पृष्ठभूमि के पूर्वजों, संपत्तियों और उम्मीदवारों की देनदारियों के बारे में मतदाताओं के सूचना के अधिकार से संबंधित था, राज्य निर्वाचन आयुक्तों ने सुप्रीम कोर्ट के आदेश की तर्ज पर आदेश जारी किए।

जहां तक गांव से जिला–स्तर तक निर्णय लेने की प्रक्रिया में हमारी आबादी के पृथक वर्गों को शामिल करने का सलल है, हमने लगातार प्रगति देखी है। महिलाओं ने बड़े पैमाने पर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया है। 2015 में, 13,41,773 महिलाएं स्थानीय सरकारों के लिए चुनी गई और इस संख्या की तीन गुना महिलाओं ने चुनाव लड़ा। विशेष रूप से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की महिलाओं ने अपना उचित हिस्सा सुरक्षित कर लिया है।

श्रेणियों में विभाजित और पुरुष वर्चस्व वाले हमारे समाज की यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि हैं। आमतौर पर यह धारणा है कि यह उन परिवारों में पुरुष लोग है जो निर्वाचित महिला सदस्यों को नियंत्रित करते हैं; यह आंशिक रूप से सच हो सकता है, लेकिन अध्ययनों से पता चलता है कि स्थिति तेजी से बदल रही है। विभिन्न स्तरों पर सभी पंचायतों और नगरपालिकाओं में से एक तिहाई महिला अध्यक्ष हैं। वर्ष–दर–वर्ष सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों से निर्वाचित महिलाओं की संख्या भी बढ़ रही है।

इस अनूठे प्रयोग ने बदले में एक अभूतपूर्व पैमाने पर सामाजिक आंदोलन और मौन क्रांति पैदा की है। चूंकि स्थानीय स्वशासन पूरे देश में अस्तित्व में आ गया हैं, इसलिए उनकी कार्यप्रणाली जांच के दायरे में आ गई है। लोगों के द्वार पर सरकार को ले जाने के लिए धीरे–धीरे अनुकूल माहौल बनाया जा रहा है।

सार्वजनिक निधियों का कुशल उपयोग और उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय और राज्य–स्तर पर कई विस्तृत–तंत्र हैं। ऑडिट के लिए समयबद्ध संस्थागत–तंत्र हैं। साथ ही, सरकार द्वारा प्रायोजित तथा नागरिक समाज संगठनों द्वारा समर्थित सतर्कता समितियां हैं। दूसरे स्तर पर, भारत में सीधे लोकतंत्र के लिए एक संवैधानिक मंच बनाने का अद्वितीय गौरव 'ग्रामसभा' है जिसे स्थानीय विकास और व्यय की देखरेख के लिए विशेष शक्तियां प्राप्त हैं। इन अभिनव कदमों से 'सामाजिक लेखापरीक्षा' की अवधारणा उभरी है।

ऐसे कुछ राज्य हैं जहां लोकतंत्र की खोज बढ़ रही है। जम्मू–कश्मीर का मामला लें। जम्मू–कश्मीर में पिछले पंचायत चुनावों के दौरान, अप्रैल 2011 में, मैंने कश्मीर के दूरदराज के गांवों में कई दिन बिताए थे। औसत मतदाताओं का टर्न–आउट 80 प्रतिशत से ऊपर था। ऐसा इसलिए था क्योंकि स्थानीय लोकतंत्र भविष्य के लिए उनकी आशा था।

पंचायत चुनाव के दिन श्रीनगर ब्लॉक में धारा हरिवान गांव में, दो घंटे के भीतर 50 प्रतिशत से अधिक लोगों ने अपने वोट डाले। एक उत्सव के मूड में पुरुष, महिलाएं, युवा और बच्चे सड़कों पर थे। स्थानीय सरकार के चुनाव समुदायों के बीच एक 'बांड' बनाते हैं। तंगमार्ग तहसील अशजी में एक्सप्रेस मार्ग से गुलमर्ग पर, पंडित महिलाओं ने पंचायत चुनाव के दौरान कश्मीर में समुदायों के बीच मौजूद सद्भावना को कम करने वाले मुस्लिम उम्मीदवार सुरिया को हराया। कश्मीर का यह मामला सात साल पहले का है। लेकिन आज, पंचायत चुनाव राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी की वजह से स्थगित कर दिया गया है। चुनावों के दौरान बड़ी लड़ाई और तनाव हो सकता है। हालांकि, भारत के आम जन के लिए पंचायत चुनाव लोकतंत्र को मजबूत करने के श्रेष्ठ अस्त्र है।

आज, जबकि राज्य सरकारें और सत्तारुढ़ दल/दलों ने पंचायत चुनावों को एक या अन्य वजह से स्थगित करने का फैसला किया है, वहीं मुख्य न्यायाधीश वाई के सभरवाल (2006) की अध्यक्षता में पांच न्यायाधीशों की संविधान खंडपीठ के फैसलों का हवाला दिया गया है जिसमें कहा गया कि नगरपालिकाएं और पंचायतें राज्यों में ज़मीनी लोकतंत्र के स्तंभ हैं और चुनाव आयोगों को राज्यों में "ऐसी स्थितियों के आगे झुकना नहीं चाहिए जोकि स्वार्थवश चुनावों को स्थगित करने के उद्देश्य से पैदा की गई हो।"

भारतीय लोकतांत्रिक तंत्र में दो मौलिक परिवर्तन हुए हैं: (i) भारतीय राजनीति का लोकतांत्रिक आधार बढ़ गया है, और (ii) इससे भारत के संघवाद में महत्वपूर्ण बदलाव आए हैं और जिला और निचले स्तर पर लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित स्थानीय सरकारों के साथ यह बहु–स्तरीय संघ बन गया है।

उपलब्धियों, खोए अवसरों और आगे की चुनौतियों का आकलन करने के लिए 25 वर्ष का समय काफी है। पंचायती राज की ढाई दशक की यात्रा सफलताओं और असफलताओं से भरी है। सवाल यह है जोकि पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 2003 में अपने पत्र में कहा था कि संघीय राजनीति में पंचायत क्या शासन का तीसरा स्तर बन गया है? स्थानीय शासन प्रणाली, जिसकी शुरुआत बेहद उत्साह से की गई थी, को कई समस्याओं और शक्तिशाली दुश्मनों का सामना करना पड़ रहा है।

क्या यह वास्तविकता नहीं है कि आज भी अपनी स्थानीय समस्याओं के लिए, ग्रामीणों को अपने विधायकों, सांसदों या अधिकारियों के पास जाना पड़ता है; ग्राम सेवकों से बीडीओ और कलेक्टरों तक को?

भारत के कई राज्यों का स्थानीय सरकारी संस्थानों के प्रति रवैया जिम्मेदारीपूर्ण नहीं था। उदाहरण के लिए जब ग्यारहवें वित्त

आयोग ने 2001 से 2005 की अवधि के लिए पंचायती राज संस्थानों और शहरी स्थानीय निकायों के लिए 10,000 करोड़ रुपये रखे थे। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार तब राज्य सरकारें केंद्र सरकार से 1646 करोड़ रुपये के लिए दावा नहीं कर सकी थी। क्यों? क्योंकि उन्होंने इन फंडों को स्थानांतरित करने के लिए केंद्र सरकार द्वारा स्थापित कुछ बुनियादी मानदंडों को पूरा नहीं किया था। केवल चार राज्य– केरल, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, राजस्थान पूरी राशि प्राप्त कर सके। यह केवल एक उदाहरण है यह बताने के लिए कि राज्य सरकारें स्थानीय शासन प्रणाली के हितों को नजरअंदाज करते हुए किस तरह से व्यवहार कर सकती हैं। यह प्रवृत्ति आज भी जारी है। यह इस परिदृश्य के खिलाफ है कि कई लोग यह सुझाव देने की सीमा तक चले गए हैं कि केंद्र सरकार को स्थानीय सरकारों से सीधे निपटना होगा।

मैं इस तथ्य को रेखांकित करना चाहता हूं कि अगर हम स्थानीय स्वशासन के संस्थानों को केंद्र में रखने और साथ–साथ नीति निर्माताओं के एजेंडा में शीर्ष पर रखने के प्रयासों को ढीला छोड़ते हैं तो 73वें और 74वें संशोधन खतरे में होंगे। हमें भारत में पंचायत और नगरपालिकाओं के लिए एक नया सरोकार चाहिए। यह नया सरोकार पंचायत और नगरपालिकाओं को यानी, जिला और निचले–स्तर को सरकार में पहले स्तर पर ले आएगा। यह नया सरोकार जल्द से जल्द इस देश से गरीबी उन्मूलन की नीतियों और कार्यक्रमों को लागू करने की स्वतंत्रता देगा; 2025 तक गरीबी–रेखा भारत के लिए पूरी तरह से अप्रासंगिक हो जाएगी!

यदि हमारे पास कोई नया सरोकार है, तो वह 32 लाख पुरुषों और महिलाओं के लिए एक नया अध्याय खोल देगा जो हर पांच साल में पंचायतों और नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचित हो रहे हैं।

केंद्र सरकार और राज्य सरकारों को दो क्षेत्रों में ध्यान देना चाहिएः पहला–**जिला योजना**। जिला स्तर की योजना एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। अधिकांश जिला पंचायतों ने इसे आवश्यक आंकड़ों, सुविधाओं, तकनीकी अधिकारियों और अन्य अधिकारियों के साथ गंभीरता से नहीं लिया है। केवल कुछ ही राज्यों में योजना वैज्ञानिक तरीके से पड़ोसी समूहों से शुरू होती हुई, जिला और राज्य योजना बोर्ड तक पहुंचती है। इसलिए, हम गांवों में जो पाते हैं वह है विश्वास की कमी।

दूसरा क्षेत्र है, **ग्रामसभा**। क्या ग्रामसभा केवल पंचायत हेतु सलाह निकाय हैं? क्या पंचायतों पर बाध्यकारी नहीं है? लोकतंत्र में लोग संप्रभु होते हैं। इसलिए, सबसे अच्छी लोकतांत्रिक व्यवस्था प्रत्यक्ष लोकतंत्र है। ग्रामसभा जो एक संवैधानिक निकाय है, भारत में प्रत्यक्ष लोकतंत्र है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 243–ए के अनुसार "एक ग्रामसभा गांव–स्तर पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग कर सकती है और ऐसे कार्यों का प्रदर्शन कर सकती है जोकि राज्य विधानमंडल कानून बना करके कर सकते हैं।" ग्रामसभा व्यावहारिक अर्थ में लोगों की कार्यशील सभा है। और इसके कार्यों और शक्तियों को राज्य अधिनियमों द्वारा निर्धारित किया जाना चाहिए। लेकिन आज, ग्रामसभा स्थानीय सरकारों की सबसे अधिक हाशिये पर खड़ी संस्था है।

याद रहे कि ग्रामसभा, शायद हमारे नए लोकतांत्रिक संस्थानों में श्रेष्ठ सामाजिक लेखा परीक्षा (ऑडिट) इकाई है। चूंकि सार्वजनिक तौर से उत्साहित नागरिक और उनकी सामूहिकता सामाजिक लेखा परीक्षा की कुंजी है, ग्रामसभा के सदस्य, प्रतिनिधि निकायों के सभी वर्ग–ग्राम पंचायत, पंचायत समिति और जिला परिषद अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से सामाजिक चिंता और सार्वजनिक हित के मुद्दों को उठा सकते हैं और स्पष्टीकरण मांग सकते हैं। विभिन्न संगठनों से रिटायर्ड लोग, शिक्षक या अन्य जिनकी सत्यनिष्ठा संदेह से परे हो, सामाजिक लेखा परीक्षा मंच या सामाजिक लेखा परीक्षा समिति बना सकते हैं।

संविधान इस मामले को पूरी तरह से राज्य विधानसभा (अनुच्छेद 243 ए) पर छोड़ देता है। इस तथ्य को व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है कि ग्रामसभा हमारे देश की पंचायत प्रणाली में केंद्रीय भूमिका में होनी चाहिए। ग्रामसभा सिफारिशों और सलाहों की प्रकृति में निर्णय निकाय संस्था हैं और इसलिए, पंचायतें ग्रामसभा को अनदेखा नहीं कर सकती और उनके फैसले को रद्द नहीं कर सकती हैं।

संक्षेप में, केंद्र सरकार और सभी राज्य सरकारों को लोगों, अधिकारियों, सिविल सोसायटी, राजनीतिक नेताओं को "स्वशासन के संस्थानों" को कैसे केंद्र में लाया जा सकता है, के बारे में जानकारी देने के लिए एक राष्ट्रीय अभियान शुरू करना होगा। आखिरकार, हमें 'स्थानीय सरकार की संस्कृति' बनाने के लिए काम करना है जोकि अब तक हमारे सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था से अनुपस्थित है।

मैं एक प्रश्न के साथ अपनी बात खत्म करता हूं: भारत में हमारे 83.5 करोड़ ग्रामीण कैसे कह सकते हैं: "हमारी पंचायतः हमारा भविष्य।"

यह समय सभी संबद्ध लोगों के लिए गंभीरता से लेने का है और इस दिशा में शोध और अनुसंधान करने का है; यह पता लगाने के लिए कि क्या वास्तव में हमारे पास पंचायतों को समर्पित 29 विषयों और नगरपालिकाओं के लिए 18 विषयों के साथ एक सशक्त स्थानीय सरकार है? आधुनिक सुविधाओं के साथ पंचायत भवन कितनी पंचायतों के पास हैं? क्या निर्वाचित पंचायत प्रतिनिधियों की क्षमता निर्माण एक सतत प्रक्रिया है? क्या एसआईआरडी पूरी तरह से राज्यों में हजारों स्थानीय सरकारी प्रतिनिधियों को प्रशिक्षित करने के लिए सुसज्जित हैं? वास्तव में, प्रत्येक जिले में निर्वाचित स्थानीय सरकारी प्रतिनिधियों के लिए एक प्रशिक्षण केंद्र होना चाहिए। इसे एक निवेश के रूप में देखा जाना चाहिए जोकि मानव पूंजी बनाएगा।

(लेखक अध्यक्ष, सामाजिक विज्ञान संस्थान,
नई दिल्ली हैं।)
ई–मेलः gemathew@yahoo.co.in